Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN(o): 2581-6241
Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 7.384
Volume - 7, Issue - 10, October - 2024

DOIs:10.2018/SS/202410002 --:-- Research Paper / Article / Review

महात्मा ज्योतिबा फुले और समाज सुधार (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)

[1] डॉ. सुनीता सिंह, [2] सुश्री सीता पाण्डेय,
[1]असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विभाग, रमाबाई राजकीय महिला महाविद्यालय अकबरपुर, अंबेडकरनगर, उत्तर प्रदेश
E-mail sunitasinghfd@gmail.com

[2]असिस्टेंट प्रोफेसर-समाजशास्त्र विभाग,, रमाबाई राजकीय महिला पी.जी. कॉलेज, अकबरपुर, अम्बेडकरनगर
E-mail sp545138@gmail.com

सारांश : महात्मा ज्योतिबा फुले, का जीवन एवं उनके प्रभावशाली व सराहनीय कार्य भारतीय समाज के सुधार की दिशा में एक प्रेरणादायक स्रोत बने हुए हैं। उन्होंने भारतीय समाज में 'जातिगत भेदभाव', 'अंधविश्वास' और 'सामाजिक असमानता' के खिलाफ एक मजबूत आवाज उठाई तथा समाज के सभी वर्गों के लिए 'समानता एवं न्याय' की ओर अग्रसर होने का प्रयास किया। फुले के 'सत्यशोधक समाज की स्थापना', 'महिला शिक्षा में उनका योगदान' एवं 'दलित अधिकारों के प्रति उनकी प्रतिबद्धता' ने समाज में एक नई चेतना का संचार किया। इस शोध का मुख्य उद्देश्य, फुले के कार्यों एवं विचारों का विश्लेषण करना है, जिससे समझा जा सकें कि कैसे उन्होंने समाजहित में परिवर्तन लाने का प्रयास किया। अतः इस शोध पत्र में फुले की क्रांतिकारी दृष्टिकोण, सामाजिक परिवर्तन की चेतना के साथ 'सामाजिक न्याय' के लिए समकालीन संघर्ष एवं प्रयासों पर 'दीर्घकालिक सामाजिक प्रभाव' को समाजशास्त्रीय विचारों में विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द : ज्योतिबा फुले, समाज, दलित वर्ग, नारी शिक्षा, समाजिक सुधार, सत्यसोधक।

1. परिचय :

महात्मा ज्योतिबा फुले, ने अपने जीवन में कई सामाजिक सुधार हेतु प्रयास किया, जिनका उद्देश्य मुख्य रूप से समाज के सभी वर्गों को 'समानता एवं सम्मान' के साथ 'जीने का अधिकार' प्रदान करना था[1]। विशेष रूप से फुले ने शिक्षा के माध्यम से 'सामाजिक जागरूकता' फैलाने का महत्वपूर्ण कार्य किया, उनका मानना था कि "शिक्षा न केवल व्यक्तिगत विकास का माध्यम है, बल्कि यह समाज में बदलाव लाने का सबसे प्रभावशाली साधन भी है"[16]। इस संदर्भ में उनके विचार वर्तमान में भी उपयुक्त एवं संगत हैं और भारतीय समाज में चल रहे विभिन्न 'सामाजिक आंदोलनों' के लिए प्रोत्साहन का स्रोत बने हुए हैं।

महात्मा ज्योतिबा फुले, भारतीय 'समाज सुधारक, लेखक और शिक्षाविद्' थे, जिन्होंने न केवल अपने समय में, बल्कि वर्तमान में भी 'सामाजिक न्याय और समानता' की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उनका जीवन 'संघर्षशीलता और समर्पण' की कहानी है, जिसने 'अशिक्षित वर्गों एवं विशेष रूप से दलितों' को जागरूक किया और उन्हें अपने अधिकारों के लिए लड़ने के लिए प्रेरित किया। फुले ने, 'जातिगत पक्षपात/प्रथा', 'भ्रान्ति' और 'महिलाओं के अधिकारों' के लिए जो आंदोलन चलाए, वे आज भी समाज में महत्वपूर्ण हैं। वे मानते हैं कि "जाति-प्रथा केवल वेदना एवं अपमान के सिवाय कुछ भी नहीं देता है", इसी संदर्भ उन्होंने कहा कि[10] -

"जा तन लागे वही तन जाने,
बीज क्या जाने गव्हारा रे ।"

फुले का, जीवन एक ऐसी 'प्रेरक शक्ति' है, जो हमें यह सिखाता है कि "समाज में बदलाव लाने के लिए केवल विचारशीलता ही नहीं, बल्कि ठोस कार्य करना भी आवश्यक हैं"। उन्होंने न केवल अपनी रचनाओं के माध्यम से

'सामाजिक मुद्दों' को उठाया, बल्कि उन्होंने विभिन्न 'संस्थाओं की स्थापना' कर उन्हें व्यवहार में भी उतारा। उनके द्वारा स्थापित 'सत्यशोधक समाज', 'शिक्षा संस्थान' और 'नारी मुक्ति (नारी सशक्तिकरण)' के लिए किए गए प्रयास, उनकी दूरदर्शिता और साहस को दर्शाते हैं। महात्मा ज्योतिबा फुले का जन्म (11 अप्रैल 1827 को) पुणे (महाराष्ट्र) में एक साधारण माली परिवार में हुआ। उनका परिवार उस समय की 'वर्ण व्यवस्था' के तहत 'शूद्र वर्ग' से संबंधित था, जिसने उनके जीवन को प्रारंभ से ही 'सामाजिक वर्गीकरण' का सामना करने के लिए प्रेरित किया[9]। फुले ने अपने जीवन की 'आरंभिक शिक्षा' अपने माता-पिता से प्राप्त की, लेकिन समाज में व्याप्त कुरीतियों और असमानताओं के कारण उन्होंने 'औपचारिक शिक्षा' के लिए आत्मसंघर्ष किया।

फुले ने' अपनी पत्नी सावित्रीबाई फुले के साथ मिलकर "महिला शिक्षा" के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया जिसके कारण उन्हें नारी शिक्षा के लिए "भारत में अग्रदूत" के रूप में भी जाना जाता है। उन्होंने (1848 में), भारत का पहला 'लड़कियों का स्कूल' (पुणे, महाराष्ट्र में) स्थापित किया, जिसने महिला शिक्षा को एक नई दिशा प्रदान की[2]। फुले ने अपनी पुस्तकों (जैसे- तृतीय रत्न' 1855; ब्राम्हणाचे कसब, 1869; गुलामगिरि, 1873; पोवाडा : छत्रपति शिवाजी राजे भोसले का पोवाडा, 1889; सार्वजनिक सत्य धर्म पुस्तक, 1891) में तत्कालीन समाज में व्याप्त 'अलगाव के खिलाफ' आवाज उठाई तथा समाज के विभिन्न मुद्दों को उजागर किया और लोगों को जागरूक किया[10]। फुले की रचनाएं, आज भी उन लोगों के लिए उमंग एवं उत्साह का स्रोत हैं जो 'सामाजिक न्याय और समानता' की दिशा में कार्यरत हैं। उनकी रचनाएं केवल 'साहित्यिक कृतियां' नहीं हैं अपितु ये 'सामाजिक अन्याय', 'विषमता', 'अनैतिक कृत्यों' और 'शोषणकारियों' के विरुद्ध एक सशक्त आवाज का प्रतिनिधित्व करती हैं। उनकी लेखनी ने न केवल तत्कालीन समाज को जागरूक किया वरन् आने वाली पीढ़ियों के लिए भी प्रेरणास्वरूप बनी।

महात्मा ज्योतिबा फुले ने, भारतीय समाज में 'मूल निवासियों' की धारणा को महत्वपूर्ण माना है। उन्होंने यह समझा कि समाज में 'जातिगत ऊँच-नीच एवं सामाजिक असमानता' को समाप्त करना आवश्यक है जिससे 'सभी वर्गों को समान अधिकार' प्रदान करें। फुले ने जातिगत असामनता को एक 'सामाजिक बुराई एवं कुरीति' के रूप में देखा और इसे समाप्त करने के लिए 'सत्यशोधक दृष्टि' का विकास किया[11]। उनकी दृष्टिकोण ने यह स्पष्ट किया कि, 'वर्ण और धर्म' के आधार पर वर्गीकरण न केवल 'अनैतिक एवं अन्यायपूर्ण' है बल्कि यह समाज के 'सकारात्मक परिवर्तन एवं विकास' में भी बाधा डालता है।

सत्यशोधक दृष्टि के तहत, फुले ने समाज में व्याप्त 'अंधविश्वास (अज्ञानता) और बुराइयों' के खिलाफ लड़ाई शुरू की। उन्होंने, समाज को जागरूक करते हुए यह भी बताया कि "शिक्षा के माध्यम से ही लोग अपने अधिकारों और कर्तव्यों को समझ सकते हैं"। उनकी इस विचारधारा ने समाज में एक नई 'चेतना' का संचार किया, जिससे लोग अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हुए, और सामाजिक बदलाव के लिए संगठित होने लगे[4]। जब हम मूल निवासियों की 'पहचान और अधिकारों' की बात करते हैं, तो हमें फुले की 'सामाजिक विकास संबंधी विचारों' को ध्यान में रखना चाहिए क्योंकि उनकी विचारधारा ने भारतीय समाज को एक 'नया दृष्टिकोण' देते हुए सुसज्जित किया है, जो हमें 'सामाजिक कल्याण', 'नैतिकता', 'स्वतंत्रता' एवं 'समानता' की दिशा में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता है।

फुले ने "ब्राह्मणवादी व्यवस्था" के तहत "शूद्रों और अति-शूद्रों (दलितों)" के शोषण और उत्पीड़न के खिलाफ आवाज उठाई। उन्होंने महसूस किया कि समाज में 'ऊंची जातियों' द्वारा 'निचली जातियों' पर होने वाले 'अत्याचार और अनादर (दुराग्रह)' को खत्म करना आवश्यक है। उनका मानना था कि "शिक्षा और जागरूकता" ही वह मार्ग है, जिसके माध्यम से शोषित वर्गों को उनके अधिकार दिलाए जा सकते हैं[3]। फुले स्वीकार करते हैं कि 'जातिगत विषमता' न केवल सामाजिक न्याय का उल्लंघन है, बल्कि यह राष्ट्र की 'एकता और विकास' के लिए भी हानिकारक है[12]। उन्होंने अपने विचारों को स्पष्ट करने के लिए अनेक लेखन कार्य किए, जिनमें उन्होंने "जातिवाद" को एक बुराई के रूप में उजागर किया। उनका प्रसिद्ध ग्रंथ "गुलामगिरी" जातिवाद के खिलाफ एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है, जिसमें उन्होंने समाज में व्याप्त 'हीनभावना और तर्कहीन विश्वासों' की जड़ों का विश्लेषण किया। फुले ने ही, सर्वप्रथम भारतीय समाज के 'दलित एवं पिछड़े वर्गों' के बीच शिक्षा की ज्योति जलाई और कहा[10]–

"अब तो तुम भी पीछे मत जाओ, धिक्कार हो मनुमत को,

हम शिक्षा पाते ही जाएंगे वह सुख, पढ़ लो मेरा लेख, जोती कहे ।"

उनके विचारों एवं कार्यों ने, भारतीय समाज के विभिन्न वर्गों में 'जागरूकता फैलाने' का कार्य किया और यह सुनिश्चित किया कि "समाज का हर वर्ग अपने अधिकारों के लिए खड़ा हो सके"। फुले ने, जाति व्यवस्था को 'धार्मिक और आध्यात्मिक आधार' पर चुनौती भी दी [7]। उन्होंने इसे एक 'मिथक' के रूप में प्रस्तुत किया और समाज को यह समझाने का प्रयास किया कि "जातिवाद का कोई आधार नहीं है"। इस प्रकार, फुले का योगदान 'वर्गीय पक्षपात' के खिलाफ एक 'ऐतिहासिक आंदोलन' के रूप में देखने योग्य है, जो आगे चलकर 'भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन' का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया।

शिक्षा क्षेत्र, में भी फुले का सबसे महत्वपूर्ण योगदान रहा है, उनका मानना था कि "शिक्षा वह शक्ति है, जो व्यक्ति को अज्ञानता और शोषण के चक्र से बाहर निकाल सकती है"[12]। उन्होंने 'शोषित वर्गों' के बच्चों के लिए स्कूल स्थापित किए और यह सुनिश्चित किया कि "समाज के हर तबके को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार मिले"। फुले का शैक्षिक दृष्टिकोण केवल 'पुस्तकीय ज्ञान' तक सीमित नहीं था, बल्कि उनका उद्देश्य 'सामाजिक', 'सांस्कृतिक' और 'नैतिक विकास' भी था।

इसी क्रम में, ज्योतिबा फुले ने 'दलितों के अधिकारों' की रक्षा के लिए भी विशेष ध्यान दिया। उन्होंने यह बताया कि 'शिक्षा का लाभ केवल उच्च जातियों तक सीमित न रहे'। फुले का यह प्रयास यह दर्शाता है कि "उन्होंने समाज के सबसे कमजोर वर्गों के लिए भी शिक्षा को एक महत्वपूर्ण अधिकार माना"[10]। इस तरह, फुले ने शिक्षा को एक ऐसा साधन बनाया, जिसके माध्यम से दलित 'समुदाय अपने अधिकारों और सामाजिक स्थिति में सुधार' कर सके। उन्होंने, दलित बच्चों को 'आत्म-सम्मान और स्वाभिमान' के साथ जीने की भी प्रेरणा दी। फुले के इस प्रयास ने न केवल 'दलित समुदाय को शिक्षा का अधिकार दिया', बल्कि यह भी बताया कि 'शिक्षा समाज में समानता लाने का एक महत्वपूर्ण उपाय है'[16]। उनके स्कूलों में दलित बच्चों को 'सामाजिक अन्याय' के खिलाफ निपटने के लिए भी प्रेरित किया जाता था। इस प्रकार, फुले का यह योगदान 'दलित अधिकारों' के लिए एक 'मील का पत्थर' साबित हुआ और 'स्वतंत्रता संग्राम' में दलित समुदाय की भागीदारी को बढ़ावा दिया।

शिक्षा के माध्यम से "महिलाओं की स्थिति" में सुधार के लिए फुले ने महत्वपूर्ण प्रयास किये, उन्होंने 'विधवा पुनर्विवाह' और 'बाल विवाह' के खिलाफ आवाज उठाई तथा महिलाओं को उनके अधिकार दिलाने के लिए संघर्ष किया [5]। उनका दृष्टिकोण इस बात पर आधारित था कि 'महिलाओं को समान अधिकार और अवसर' दिए बिना समाज में 'वास्तविक सुधार संभव नहीं है'। महात्मा ज्योतिबा फुले ने 'नारी मुक्ति' के विचार को अपने समाज सुधार के आंदोलन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बनाया [6], साथ ही उन्होंने यह भी समझाया कि 'बिना महिलाओं के सशक्तिकरण' के समुदाय-सुधार संभव नहीं है। वे मानते थें कि [10]-

"स्वतंत्रता अनुभव की पहचान हमें, नहीं है मनुष्यों को,
इसलिए अधिकार दे नारी को, खानी पड़ेगी कसम तुझको।"

फुले का, मानना था कि 'महिलाएँ केवल घरेलू कार्यों' तक सीमित नहीं रह सकतीं, बल्कि उन्हें 'शिक्षा और समान अधिकारों' के माध्यम से समाज में अपनी पहचान बनानी चाहिए। फुले ने, भारत का पहला 'महिला विद्यालय' स्थापित करके नारी मुक्ति के विचार का एक ठोस उदाहरण प्रस्तुत किया है। यह बालिका विद्यालय न केवल शिक्षा का मुख्य केंद्र था, बल्कि यह एक ऐसे आंदोलन का 'प्रतीक' बन गया जिसने महिलाओं को अपने 'अधिकारों के प्रति जागरूक' किया अर्थात इस विद्यालय में महिलाओं को ऐसी शिक्षा दी गई, जिससे वे समाज में अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो सकें[2]। फुले ने समाज के लोगों में यह विचार संचरित करने का प्रयास किया कि 'शिक्षा, महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने का सबसे प्रभावशाली माध्यम है' और साथ-ही उन्होंने समाज में महिलाओं के प्रति व्याप्त 'मिथक मान्यताओं' और 'पूर्वाग्रह' के खिलाफ शिक्षा को महत्वपूर्ण बताया। उनका मानना था कि 'शिक्षा' महिलाओं को 'स्वतंत्रता', 'आत्म-सम्मान', और 'सामाजिक सशक्तिकरण' प्रदान करती है [6]। महिला सशक्तिकरण की दिशा में फुले का योगदान आज भी महिलाओं के 'अधिकारों और समानता' के लिए एक प्रेरणास्त्रोत बना हुआ है। इस तरह 'महिला शिक्षा' के क्षेत्र में ज्योतिबा फुले का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है।

ज्योतिबा फुले ने, समाज में "विधवाओं और अनाथ बच्चों" के कल्याण के लिए भी कई महत्वपूर्ण कदम उठाए। उन्होंने विधवाओं के लिए 'आश्रय गृह' स्थापित किए, जहां वे सुरक्षित रूप से रह सकें। यह गृह उन विधवाओं के लिए एक 'आश्रय स्थल' थे, जिन्हें समाज में 'अपमान और कटुता' का सामना करना पड़ता था। फुले ने, समाज में विधवाओं के प्रति व्याप्त 'पूर्वाग्रहों' को चुनौती दी और उनके 'अधिकारों के लिए संघर्ष' किया। इसके अलावा, फुले ने 'अनाथ बच्चों' के लिए 'अनाथालयों की स्थापना' भी की। उनके द्वारा स्थापित ये अनाथालय बच्चों को न केवल भोजन एवं अन्य वस्तुएं प्रदान करते थे, बल्कि उन्हें 'शिक्षा और सामाजिक सुरक्षा' भी प्रदान करते थे [7]। फुले का मानना था कि समाज के सबसे "कमजोर वर्गों को सहारा देना प्रत्येक व्यक्ति की जिम्मेदारी है"। इन प्रयासों ने न केवल विधवाओं और अनाथ बच्चों की स्थिति में 'सुधार' किया, बल्कि उन्होंने समाज में एक 'नई सोच और संवेदनशीलता' भी विकसित की।

फुले ने, 'जातिवाद के विरुद्ध संघर्ष', 'शिक्षा क्षेत्र में योगदान', 'दलितों के अधिकारों की रक्षा', 'महिलाओं की स्थिति एवं सुधार' तथा 'विधवाओं और अनाथ बच्चों के कल्याण' के अलावा 'धार्मिक आलोचना और सामाजिक न्याय' पर भी महत्वपूर्ण कार्य किया। फुले ने 'धार्मिक रूढ़िवादिता' और 'पाखंड' की कड़ी आलोचना की। उन्होंने 'गुलामगिरी' और 'तृतीय रत्न' जैसी कृतियों के माध्यम से 'ब्राह्मणवादी समाजव्यवस्था' की कठोर निंदा की। उनका मानना था कि धर्म का उपयोग समाज के एक बड़े हिस्से को 'शोषित और उत्पीड़ित' रखने के लिए किया जा रहा है। फुले ने 'धार्मिक ग्रंथों और परंपराओं' की सामाजिक आलोचना करते हुए नए समाज की परिकल्पना की, जिसमें 'सामाजिक न्याय', 'स्वतंत्रता, सामाजिक एकता', 'समरसता', 'प्रत्येक वर्ग के लिए हितकारी विचार' और 'समानता' निहित हो [8]। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से देखा जाए, तो फुले का समाज सुधार कार्य 'संघर्ष' एवं 'परिवर्तन' के सिद्धांत पर आधारित था। उन्होंने 'संरचनात्मक असमानताओं' को चुनौती दी और नए 'सामाजिक संबंधों' का निर्माण करने की दिशा में काम किया। उनका दृष्टिकोण न केवल 'सामाजिक असमानताओं' को पहचानने पर आधारित था, बल्कि उनके उन्मूलन के लिए भी सक्रिय कदम उठाने पर था। फुले के कार्यों में 'सामाजिक गतिशीलता', 'समतामूलक समाज' और 'सामाजिक न्याय' की परिकल्पना साफ झलकती है, जो किसी भी समाज के 'स्वस्थ और न्यायपूर्ण विकास' के लिए आवश्यक है।

ज्योतिबा फुले, द्वारा किए गए समाज सुधार के प्रयासों में "सत्यशोधक समाज" की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इस संगठन ने समाज में 'जाति प्रथा', 'रूढ़िवाद' व 'सामाजिक असमानता' के खिलाफ एक सशक्त आवाज उठाई। समाजशास्त्रियों गेल ऑम्वेट और रोजालिंड ओ हैनलॉन ने इस विषय पर गहराई से अध्ययन किया है। जिनके शोध ने सत्यशोधक समाज के महत्व को अकादमिक जगत में व्यापक चर्चा का विषय बना दिया है। इन अध्ययनों के माध्यम से, यह स्पष्ट होता है कि कैसे फुले का आंदोलन और सत्यशोधक समाज ने भारतीय समाज में परिवर्तन लाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। फुले ने '24 सितंबर 1873' को 'सत्यशोधक समाज' की स्थापना की, जिसका उद्देश्य "सामाजिक अन्याय और जातिगत अलगाववाद के खिलाफ एक संगठित आवाज बनाना था"[14]। यह समाज उन सभी लोगों के लिए एक मंच प्रदान करता था, जो 'समाज सुधार' की दिशा में कार्यरत थे। सत्यशोधक समाज ने 'जातिवाद', 'कपोलकल्पित धारणा' एवं 'सामाजिक असमानताओं' के खिलाफ लड़ाई को मजबूत किया तथा भारतीय समाज में जागरूकता फैलाने का कार्य किया[16]। फुले का यह समाज न केवल 'जातिगत भेद-भाव' के खिलाफ संघर्ष करता था, बल्कि इसने 'सामाजिक व राजनीतिक मुद्दों' पर भी लोगों को संगठित किया। सत्यशोधक समाज ने 'कार्यकर्ताओं और विचारकों' को एकजुट किया, जो कि समाज सुधारों के लिए प्रतिबद्ध थे। इसके माध्यम से फुले ने समाज के निचले वर्गों (शूद्रों, दलितों आदि) को यह संदेश दिया कि वे अपने अधिकारों के लिए लड़ें और समाज में व्याप्त 'कुरीतियों' के खिलाफ आवाज उठाएं[13]। सत्यशोधक समाज ने 'समाज में शिक्षा' के महत्व को भी उजागर किया और इसे सभी वर्गों के लिए 'सुलभ' बनाने का प्रयास किया। इस समाज ने समय-समय पर 'संगोष्ठी एवं सार्वजनिक बैठकें' आयोजित की, जिनमें 'जातिवाद' व 'सामाजिक अन्याय' के खिलाफ विचार-विमर्श किया जाता था। फुले की यह संस्था आज भी भारतीय समाज में सामाजिक न्याय और समानता के लिए 'आदर्श' बनी हुई है, जो यह दर्शाती है कि उनका कार्य कितना प्रभावशाली और दूरगामी था।

अतः उपरोक्त विवेचना के परिणाम स्वरूप यह कह सकते हैं कि महात्मा ज्योतिबा फुले का समाज-सुधार कार्य न केवल उस समय के संदर्भ में महत्वपूर्ण था अपितु वर्तमान में भी उनके विचार और कार्य प्रासंगिक हैं; क्योंकि उन्होंने 'जातिवाद', 'लैंगिक असमानता', 'दलितों के अधिकारों की दमनकारी व्यवहारों', 'महिलाओं की दयनीय स्थिति',

'विधवाओं एवं अनाथ बच्चों के प्रति दुर्व्यवहार' तथा 'धार्मिक कुरीतियों' व 'सामाजिक अन्याय' के खिलाफ जो संघर्ष किया वह भारत के सामाजिक पुनर्निर्माण में एक मील का पत्थर साबित हुआ है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से फुले का योगदान इस बात का प्रमाण है कि 'सामाजिक परिवर्तन' तभी संभव है, जब समाज के 'शोषित एवं वंचित वर्गों' को उनके अधिकार दिलाने के लिए संघर्ष किया जाए और इस प्रक्रिया में 'शिक्षा', 'जागरूकता' व 'सामाजिक न्याय' प्रमुख भूमिका निभाते हैं।

2. निष्कर्ष-

फुले का जीवन एक प्रेरणा है, जो हमें यह बताता है कि जब हम 'समानता एवं न्याय' के लिए संघर्ष करते हैं, तब हम न केवल अपने लिए, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी एक 'बेहतर समाज का निर्माण' कर सकते हैं। उनके विचारों से हमें यह सीखने को मिलता है कि समाज में बदलाव लाने के लिए 'शिक्षा', 'जागरूकता' व 'संगठित प्रयास' अत्यधिक आवश्यक हैं। फुले का योगदान आज भी एक 'प्रेरणादायक धरोहर' है जो हमें सिखाती है कि 'असमानता एवं वर्गीय विभाजन' के खिलाफ संघर्ष में हर व्यक्ति की आवाज महत्वपूर्ण है। अंततः, यह शोध पत्र महात्मा ज्योतिबा फुले के योगदान को समर्पित है और उनके विचारों की पुनर्समीक्षा करने का प्रयास है, जिससे हम एक अधिक 'समतामूलक एवं न्यायपूर्ण' समाज की दिशा में आगे बढ़ सकें।

संदर्भ सूची :

1. कुमार, संजय (2022), "*महात्मा ज्योतिबा फुले के विचार: मानवाधिकारों के विशेष सन्दर्भ में*' राजकीय लोहिया कॉलेज चुरू, राजस्थान, https://www.socialresearchfoundation.com/new/publishjournal.php?editID=107।
2. गुप्ता, एस. (2021), "महिला शिक्षा में ज्योतिबा फुले का योगदान", *सेन्ट्रल एसियन जर्नल ऑफ़ लिटरेचर, फिलासफी एंड कल्चर, 2*(1), 35-39।
3. ज्योति एवं भारती, एच. (2023), "शिक्षा, सामाजिक बहिष्कार और समावेशी ढांचा: दलित महिलाओं का एक दृष्टिकोण", *दलितों की समकालीन आवाज़*।
4. प्रकाश, जय (2021), *"उन्नीसवीं सदी में भारतीय पुनर्जागरण"* https://historyguruji.com/indian-renaissance-in-the-nineteenth-century/#ज्योतिबा_फुले।
5. प्रसाद, गोपाल (2019), "*ज्योतिबा राव फुले एवं सावित्रीबाई फुले का महिलाओं के सामाजिक विकास एवं राजनीतिक जागरूकता में तुलनात्मक अध्ययन*', दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्विद्यालय, http://hdl.handle.net/10603/230645।
6. बनर्जी, एन., दास, ए., और साह, जे. (2021), "सामाजिक और शैक्षिक सुधार के माध्यम से महिलाओं को सशक्त बनाने में सावित्रीबाई फुले का योगदान: एक महत्वपूर्ण अध्ययन", *महिला शिक्षा और सशक्तिकरण: भारतीय परिप्रेक्ष्य*, 138।
7. बेगारी, जे. (2010), "ज्योतिराव फुले: एक क्रांतिकारी समाज सुधारक", *इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस*, 399-412।
8. मलिक-गौरे, ए. (2014), "*ज्योतिबा फुले: वैश्विक दार्शनिक और आधुनिक भारत के निर्माता*।
9. मलिक, बी.के. (2021), "ज्योतिराव गोविंदराव फुले", *रिविज़िटिंग मॉडर्न इंडियन थॉट, रूटलेज इंडिया*, 57-72।
10. यादव, रमेश (2018), "महात्मा ज्योतिबा फुले और सत्यशोधक समाज – आंदोलन", *इंदिरा गाँधी नेशनल ओपन यूनिवर्सिटी*, http://egyankosh.ac.in//handle/123456789/47752।
11. शर्मा, ए. (2015), "जाति, समुदाय और उपनिवेशवाद: ज्योतिबा फुले की आधुनिकता", *इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस, 76* (1), 19-24।
12. सक्सेना, आर. (2022), "फुले, गांधी और अंबेडकर दलित मुक्ति और दलित सशक्तिकरण के लिए रामबाण के रूप में शिक्षा", *कुर्द अध्ययन, 10* (2), 402-406।
13. Bhadru, G. (2002). Contribution Of Shatyashodhak Samaj To The Low Caste Protest Movement In 19th Century. *Proceedings of the Indian History Congress, 63*, 845–854. http://www.jstor.org/stable/44158153
14. Bikshapathi, Ch. (2015). Satyashodak Samaj: Formation And Activities. *International Journal of Creative Research Thoughts (IJCRT), 3*(3), 815-818. https://ijcrt.org/papers/IJCRT1135273.pdf
15. Sirswal, D. R. (2013). Jyotiba Phule: A Modern Indian Philosopher. 28-36 file:///C:/Users/DR%20RAJENDRA%20PRASAD/Downloads/JyotibaPhuleAModernIndianPhilosopher.pdf